आधुनिक जीवन

Dr. K. Sasidharan Pillai

जीवन गति है। वह निरन्तर बढता जाता है। बन्धनों और अवरोधों को पार कर निरन्तर वह बहता जाता है। सामयिक क्लेशों, कठिनाईयों और जटिल नियमों में उलझकर जीवन की गति अल्पकाल के लिए भले ही रूक जाये, परन्तु जल्दी ही वह अपना रास्ता ढूँढ निकालता है और कर्मपथ में अग्रसर होता है। जीवन को गति देनेवाले शाश्वत तथ्य हैं — इच्छाएँ, आकांक्षाएँ, लक्ष्यबोध और आशावाद।

इच्छा मनुष्य की जीवन – शक्ति है, मूल चेतना है। यह मानव जीवन को सार्थक बनाती है और मनुष्य को कर्ममार्ग की ओर उन्मुख करती है। इच्छा रहित मनुष्य के आगे अंधकार छा जाता है, सून्यता फैल जाती है। मलयालम के एक प्रसिद्ध कवि श्री इडप्पलि राघवन पिल्लै ने आत्महत्या करने के पहले लिख रखा था।—"चाहने के लिए कुछ हो, प्रेम करने के लिए कोई हो और करने के लिए कुछ काम हो; इन सब में जीवन की सार्थकता है। यदि किसी के जीवन में इनका अभाव हुआ हो तो उसका मरना ही अच्छा है। "वास्तव में आग्रह हीन मनुष्य का जीवन बेकार है। मनुष्य को काम करने की स्फूर्ति, आवेश और उल्लास प्रबल अभिलाषाओं और लालसाओं से ही प्राप्त होते हैं। अतः विकास कामी मानव के मन में इच्छाशक्ति होनी चाहिए जिसके पल्लवन से जीवन सफल बनेगा

जीवन को सचेत करनेवाला दूसरा प्रमुख तत्व है लक्ष्यबोध। मानव का कोई उदात्त लक्ष्य होना चाहिए और उस लक्ष्य-प्राप्तिकी। उसमें उत्कट आकांक्षा होनी चाहिए। यदि किसी का जीवन अलक्ष्य या उद्देशहीन हो तो उसकी इच्छाशक्ति मर जाएगी और जीवन से

वह विमुख हो जाएगा। जीवन से पलायन कर आज तक किसी ने अपने लिए कुछ नहीं पाया है। इसलिए यदि कोई व्यक्ति लक्ष्यहीन और इच्छारहित जीवन बिताता है तो समझना चाहिए कि वह अपने आपसे, अपने अस्तित्व से अन्याय कर रहा है, पाप कर रहा है। हर एक आदमी के अस्तित्व का कोई न कोई उद्देश होना चाहिए। अन्यथा मनुष्य जानवरों का जीना जीने लगेगा। जीवन यात्रा में पहुँचने की कोई न कोई मंजिल हो और वह मंजिल उदात्त भी हो तो जीवन कितना आनन्दकारी रहेगा। उस मंजिल की प्राप्ति में जीवन की सफलता है, पूर्णता है। अर्थात् लक्ष्यबोध भी मनुष्य जीवन को गति देनेवाला, चेतना प्रदान करनेवाला प्रमुख तत्व है।

जीवन व्यापार में उमंग और उल्लास भरनेवाला सबसे प्रमुख और आवश्यक तत्व है आशावाद। कठिन से कठिनतम कर्म करने के लिए भी यह मनुष्य को उत्साहित करता है। जीवन के आरंभकाल से व्यक्ति में आशा का सन्निवेश करना चहिए जिससे भविष्य में वह निराशावादी और स्वप्नजीवी नहीं बनेगा। वास्तव में आशावाद ही मनुष्य की मूल शक्ति है। किसी भी काम के पीछे करनेवाले के दिल में यह धारणा हो कि मैं यह कर नहीं सकूँगा, तो वह कर्म पूर्ण नहीं होगा। यह पेसिमिसम है जो जीवन का निषेधवादी तत्व है। इस युग का सब से बडा रोग भी यही है। मनुष्य के आत्मबल को नष्ट करनेवाला, उसकी चेतना की हत्या करनेवाला, कर्म मार्ग से उसे विमुख करनेवाला और जीवन को पतन की ओर उन्मुख करनेवाला तत्व है पेसिमिसम अथवा निराशावाद। इसलिए इस बीमारी से भी मनुष्य को मुक्त होना चाहिए। मन में यह बोध होना चाहिए कि सब कर्मों का अंत अच्छा ही होगा और सभी कठिनाईयों के बाद अच्छे दिन अवश्य आयेंगे। यही आशावाद है और यही जीवन को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाता है, आगे बढने की प्रेरणा देता है।

आधुनिक जीवन में उपर्युक्त तत्वों का लोप होता दिखाई देता है। सब प्रकार से अभिशप्त एक नयी पीढी ही इस युग की देन है। मानव-मूल्यों से वंचित, धार्मिक रूप से पतित लक्ष्यहीन, निराशावादी यह पीढी इस शताब्डी का महाशाप है। युग की रुग्णताओं और दुर्बलताओं को ठीक तरह से समझकर नवीन परंपरा को विनाश के कगार से बचाना है और असत् से सत् का मार्ग दिखाना है। देश के मनीषियों का ध्यान इस ओर हो जाए तो अच्छा है।

ऐ व

KEEZHEPARAMBAN, IST B. A. ECONOMICS

मुझे विश्वास नहीं था कि वे आयेंगे। एक गोरा युवक। वही जो उस बूढे के पास बैठे मुझ पर छिप कर देख रहा है। जरूर वही है दुलहा। जरूर

सुना कि बचपन में ही उनकी मां मर गयीं। उनकी अपनी मर्जी से ही यह शादी होती है। उनका नाम है सलाह गी। पास के कोलेज के आप लक्चरर हैं।

इतने में तसनीय बाहर मेहमानों के सामने बुलायी गयी। शरम से वह सिकुड रही थी।

'नाम क्या?'

बूढे का अच्छा सवाल! नाम तक नहीं मालुम। नाम और उम्र बहुत पहले ही लिख दी थी।

'बी. ए. पास होने के बाद पढाई क्यों छोड दी? प्रश्न का उत्तर सरल था। कहना चाहा कि दुलहा एम. ए. होने के कारण। लेकिन तसनीय चुप रही।

'खाना पकाना आता है?'

हर शिक्षित लडकी से पूछा जाने वाला प्रश्न। लेकिन सुना है कि अपने पति बनने वाले एक अमीर घर के हैं। उनकी पत्नी को खाना नहीं पकाना पडेगा

तसनीय ने उत्तर दिया—'मौका मिलने पर मां की मदद देती हूँ।'

वह जानकर कि सिलाई और संगीत में भी नसनीय निपुण है, बूढे को बडी खुशी हुई। चाय-वाय पीकर वे चले गये।

तसनीय ने गिन गिन कर दिन बिताये। आखिर उनकी चिट्ठी आयी कि शादी उनको मंजूर है। जितनी जल्दी हो सके शादी हावी भी चाहिए।

तसनीय खुशी से पागल हो उठी लेकिन जल्दी ही एक निर्दय भय उसके मन की शान्ति एवं आनन्द को ग्रसने लगा। बचपन में लगी हुई एक का वाला दाग उसके चोट

दाहिने पैर पर है। तसनीय सोचने लगी कि उसके सुन्दर पैरों कुरुप बनानेवाला वह काला दाग जरूर सलाहजी पसंद नहीं करेंगे। वह अब क्या कर सकती है। किसी को धोखा देकर शादी करना अच्छा नहीं है। क्यों कि बाद में जब सचाई मालूम होगी तो पतिदेव नाराज हो जाएँगे और जिन्दगी का सारा सुख नष्ट हो जाएगा। लेकिन कहे तो, शायद शादी भी नहीं होगी। इस प्रकार सोच सोचकर तसनीम बेचैन हो उठी।

आखिर तसनीम ने निश्चय किया कि मैं शादी के पहले उनसे मिलूगी और बात बताऊँगि। वे काफी अच्छे आदमी हैं। मुझे छोडेंगे नहीं।

एक दिन सबेरे वह सलाह जी से मिलने कोलेज गयी।

कोलेज के द्वार पर वह मिनिट भर के लिए खडी रही। क्यों कि उसके दोनों पैर कांपने लगे। ऐसे लगा कि मुँह से आवाज नहीं निकलेगी।

इतने में पीछे से आवाज आयी—— 'तसनीम, तुम यहाँ?'

मुडकर देखा तो तसनीम बिलकुल पीली पड गयी। हंसते हुए सलाहजी सामने खडे हैं। बडा यत्न कर तसनीम ने कहा— "मैं आप से कुछ जरूरी बातें कहने आयी हूँ। मेरी बातों को सुनने की कृपा कीजिए।" तसनीम को धैर्य मिल रहा था।

सलाहजी उसको साथ लेकर पास के रस्टारंड में जा बैठे। थोडी देर के मौन के बाद उन्होंने कहा—

"तसनीम, दिल खोल कर बोलो, शंका की बात नहीं। डरना मत।" लेकिन तसनीम का सारा शरीर पसीने से तर हो रहा था। उसकी बेबसी को देखकर सलाहजी को भय होने लगा।

थोडी देर बाद तसनीम ने धीमी आवाज में अपने पैर को असुन्दर कान वाले दाग के बारे में कहा और चुपचाप बैठी।

सुनकर सलाह जी ने आश्वास की सांस ली और तसनीम के निष्कलंक चेहरे की ओर प्रेम से देखा। तसनीम का चेहरा लज्जा से लाल हो गया और आँखें झुक गयी।

सलाहजी ने हंसते हुए कहा — 'पगली, मैं ने सोचा कि तुम यह कहने जा रही होगी कि तुम्हारा कोई प्रेमी है और तुम मुझ से बचना चाहती हो।'

●

दहेज

FATHIMA ABDULLAH
II B. A. ENGLISH

घंटी बजती है। क्लास बदलने का समय है। मोहन अंग्रेजी क्लास से हिन्दी क्लास की ओर चलता है। आज मास्टर जी उपन्यास पढाएँगे। प्रेमचन्द जी का 'सेवासदन'। मास्टर जी क्लास में आये तो सब शान्त बैठे। सेवासदन की कथा ने सब को आकर्षित किया था। मास्टर जी ने सेवासदन की प्रमुख समस्या का विश्लेषण करते हुए कहा—"यह दहेज की बुरी प्रथा के कारण तडपने वाले एक साधारण परिवार की दुख-कथा है। जवान लडकी की शादी में दहेज देने के लिए रिश्वत लेनेवाले पिता को आखिर गेल जाना पडता है। और कठिन परिस्थितियों में पडकर उनकी बेटी वेश्या बन जाती है। इस बुरी प्रथा ने वास्तव में एक परिवार को झकझोर डाला।"

बस, मोहन ने इतना ही सुना। उसका मन पंख फैलाकर मीलों दूर अपने परिवार की पार्श्वभूमि की ओर उड गया। दहेज, हां दहेज के भयंकर भूत ने उसके पडोस के एक परिवार को नित्य दुख की गहरी खाई में ढकेल दिया है।

* * *

वह परिवार एक विदूर - स्थल से चार वर्ष पहले कलिकट शहर में आ बसा। माँ-बाप—आमिना और हकीम सहिब, उनके तीन जवान बेटियों और तीन छोटे बेटे-ये ही परिवार के सदस्य हैं। हकीम साहिब और आमिना अपनी संतानों को बहुत चाहते हैं और उनकी पढाई के लिए बहुत तकलीफें झेलते हैं। उनके पास ज्यादा संपत्ति नहीं है। हकीम साहब को थोडा व्यापार है जिसके सहारे वे जीते हैं।

सब से बडी लडकी रशीदा बडी कुशल और होशियार है। अब बी. ए. दूसरे वर्ष में पढती है। पढाई के सिवा उसको कोई दूसरी चिन्ता नहीं। शादी करने को लोग आये तो उस ने पिताजी से कहा कि पढाई के बाद हीं शादी के बारे में सोचूँगी। हकीम साहब बहुत हीं सभ्य और शिक्षित हैं ओर बडी बेटी को बहुत मानते हैं।

दूसरी लडकी उमैश बहुत ही खूबसूरत है जो हैस्कूल में पढती है। स्कूल के एक मास्टर हशिम के मन में उमैरा के प्रति प्रेम उत्पन्न हुआ। एक

दिन हाशिम ने उमैरा से अपना अग्रह व्यक्त किया। उमैरा ने हाशिम को समझाया कि मैं एक गरीब घर की हूँ। आप को दहेज देने के लिए हमारे पिताजी के पास पैसा नहीं है। मलबार में हदेश के बिना शादी होती भी नहीं। इसलिए आप दया करके अपनी इच्छा छोड दीजिए। किन्तु उमैरा भी हाशिम को मन ही मन चाहती थी। अपने प्रेम के गले में छुरी चलाना वह चाहती नहीं थी। लेकिन उसको अच्छी तरह मालुम था कि दहेज के बिना हाशिम के मां-बाप उसे अपनायेंगे नहीं। हाशिम मास्टर उमरा की बातों को मानने के लिए तैयार नहीं था। उसने प्यार के साथ समझाया कि मैं सिर्फ तुझे चाहता हूँ, तेरा प्रेम मांगता हूँ। मैं समझाता हूँ कि उतना तू दे सकती है। प्रेम के सिवा मैं और कुछ नहीं चाहता। उमैरा भावावेश में गहगह हो गयी।

हाशिम उमैरा के पिता से मिलने आया। हाशिम की बातें सुनकर पहले हकीम साहिब को विश्वास नहीं हुआ। हाशिम ने समझाकर कहा कि मेरे जैसे पढे लिखे लोग दहेज की प्रथा के विरुद्ध लडने लगें तो मलबार की यह बीमारी दूर हो जाएगी। आप विश्वास की जिए और मेरे मां-बाप से मिलकर शादी तय कीजिए। हकीम साहिब हाशिम के पिताजी से बात की तो उन्होंने कहा कि हाशिम के बडे भाई की शादी होनी है। उसके बाद विचार करेंगे।

एक साल की प्रतीक्षा के बाद हाशिम के बडे भाई की शादी हुई। तब हाशिम ने उमैरा के पिता से मिलकर कहा कि यह मेरे पिताजी यह जान जाएँ कि आपके पास एक घर तक नहीं है, किराये के घर में रहते हैं, वे शायद विरोध करेंगे।

इसलिए एक घर खरीद लीजिए और मेरे लिए उस में एक कमरा भी तैयार कीजिए। पैसा नहीं तो कर्ज लीजिए, बाद में हम चुकाएँगे। बडी कठिनाई से हकीम साहिब ने वैसा किया। आखिर शादी का निश्चय हुआ।

इसके बाज हाशिम की माताजी और भाई कहने लगे कि दहेज लिये बिना वे शादी में शामिल नहीं होंगे। यदि घरवालों को धिक्कार कर वह शादी करेगा तो घर से निकाल दिया जाएगा। हाशिम संयट में पडा। घरवाले इस विश्वास पर बैठे रहे कि हकीम साहिब किसी न किसी प्रकार दहेज का पैसा इकट्ठा करेंगे और शादी होगी।

एक दिन सबेरे हाशिम हकीम साहिब के घर आकर क्षमा की प्रार्थना करने लगा। उसने कहा "मैं मजबूर हुँ, दहेज के बिना शादी नहीं हो सकती। दहेज लिये बिना मेरे घरवाले शादी में नहीं आयेंगे। उनको मैं छोड नहीं सकता। इसलिए आप किसी प्रकार दहेंज की व्यवस्था कीजिए।"

हकीम साहिब की आँखों के सामने अंधेरा छा गया। उनको चक्कर आने लगा। संभालकर उन्होंने कहा—"मैं घर खरीदने से कर्ज में डूबा हुआ हूँ, अब कहाँ से दहेज का पैसा लाहुँ। मुझपर दया कीजिए, मेरी बेटी को बचाइए"। लेकिन पैसे के सामने आदमी पत्थर बन जाते हैं। आखिर विवाह का निश्चय बदल गया।

आज हकीम साहब का व्यापार बन्द हो गया है। एक छोटी दुकान ही आज उस परिवार का आश्रय है। बडी लडकी आज कोलेज नहीं जाती। छोटी लडकी की भी पढाई बन्दकर दी गयी। आँसू का पीकर उमैरा दिन काटती है। उस परिवार में आपस में बातचीत कम होती है। छोटे लडके भी भूखे होकर इधर-उधर बैठे रहती हैं। निर्जीवता और रमसान की मूकता उस परिवार में घर कर गयी हैं।

* * *

घंटी बजी। मोहन अब भी चिन्ता में मग्न था। मित्र गणेश ने उसे हिलाकर पूछा — "अरे बार, क्या तुम सपना देख रहे हो। उठो सबजक्ट क्लास है। जल्दी चलो।"

दहेज के अभिशाप की छाया के तले पलनेवाली अपने क्लास की लडकियों को देखकर मोहन ने एक ठंडी सांस ली और क्लास की ओर चला गया।

दुनिया

MOHAMMED A.
Ist B. A. ECONOMICS

आँसू सारा धन मेरा है
हृदय दुख से जल जाता है
तन भी दुर्बल ही मेरा है।
आपस का प्रेम न मिलता है।

भाईपन भी तजते हैं सब
संघर्षमय इस दुनिया में
आपस में भी भिडते हैं सब
स्वार्थपरता ही है जनता में।

मनुष्य धर्म तो छोड देता है
इसलिए वह दुख सहता है
जानवर की भी गति अपनी है
यह भी मनुष्य न जानता है।

हार मेरी, जीत तेरी

Ambalangadan Mohamed
I B. A., Economics.

सूर्य ने आँख नहीं खोली थी। रात की वर्षा के कारण पत्तों से पानी टपक रहा था। ऊषा का सौंदर्य पीकर मैं लेटा था कि पत्नी आकर बोली —

"पानी गरम हो गया है, उठकर आइए"

देखा तो वह सामने खडी थी। अधरों में मुसकान थी, आँखों में प्रेम और चेहरे में भोलापन। वह मेरे पास बैठी, सिर गोद में लेकर प्रेम से आँखों में देखने लगी। थेडी देर देखने के बाद उसने मुस्कुरा कर पूछा —

"अपने दिल अब किस को दिया है।"

"तुम्हारा मतलब" लेकिन जल्दी वे पुरानी बातें प्रभात की किरणों की भाँति मेरे स्मृति–मण्डल में दौड आयीं।

उन दिनों मैं बी. एस. सी. में पढ रहा था। एक दिन शाम को कॉलेज से घर आ रहा था। प्रकृति सुन्दरी के कपोल लाल लाल हो रहे थे। एक गीत गुन गुना कर मैं चल रहा था कि पीछे से एक मीठी आवाज कानों में पडी। मुडकर देखा तो हफीसखाँ की इकलौती बेटी जुलेखा अपने घर के सामने खडी थी। रोज वह उस समय वहीं खडी रहती थी। मैं कभी अनजाने में भी उस ओर देखने लगूँ तो वह सिर झुका लेती थी। लेकिन उस दिन वह मेरी ओर देखकर मुस्कुराने लगी। वह मेरे पास आकर बोली —

"पिताजी आप से मिलना चाहते हैं। घर आइए।"

"क्या बात है ?"

"बात तो मुझे मालुम नहीं। आप पिताजी से पूछ लीजिए। कहते हुए हंसी छिपाने की वह कोशिश कर रही थी।

उसके पिताजी से मेरा अच्छा परिचय था। देर तक बोलते बैठना उनका स्वभाव था। मुझे जलदी जाना भी था। लेकिन जुलेखा ने कहा —

"कोई जरूरी बात है, आप जल्दी जा सकेंगे।"

मुझे उसके घर जाना पडा। मुझे कुर्सी पर बिठाकर वह घर के अन्दर चली गयी।

थोडी देर बाद वह चाय ले आयी। मैं ने सोचा कि हफीसखाँ अभी भीतर से आयेंगे। लेकिन जुलेखा के हाव-भाव कुछ निराले से लगते थे। वह पैरों से जमीन पर चित्र खींच रही थी।

चाय पीते हुए मैं ने पूछा —

"तुम्हारे पिताजी कहाँ हैं?"

"माताजी और पिताजी बाहर गये हैं। यहाँ मैं अकेली हूँ। इसलिए पिताजी के बदले अब बेटी ही बोलेगी"

"तुम झूठ क्यों बोली? अच्छा, मुझे जाना है।" क्षमा कीजिए। आप से बहुत पहले से कुछ बोलना चाहती थी। लेकिन आज तक मुझे धैर्य नहीं मिला।"

उसका सुन्दर चेहरा लज्जा से और भी सुन्दर लग रहा था। मेरे मन में हलचल मचने लगी। अपने को संभाल कर पूछा —

"आखिर तुम क्या कहना चाहती हो?" उसने रुक रुककट कहा —

"मैं ने अपना दिल आपको अर्पित किया है। आप से प्रेम की याचना करती हुँ। मेरे प्रेम को मत ठुकराइये। आप अपना दिल मुझे दीजिए।"

"अजीब बात! सुन लो, मेरे दिल का दरवाजा शादी के बाद सिर्फ दुलहन के लिए खुलेगा।"

"तब आप मुझसे मुहब्बत नहीं करते?

"नहीं, मुझे भूल जाओ"

"प्रयत्न से भूल सकती तो पहले ही भूल जाती। मैं अजमर्थ हुँ। आखिरी सांस तक आप की याद करती रहूँगी।"

"तुम रोती हो?"

सिर झुकाकर वह रोती रही।

मुझे भी दुख हुआ। समझाकर कहा —

"देखो, आपस में प्रेम कर शादी करने में कोई खूबी नहीं है, क्यों कि शादी के बाद आवेग शक्तिशाली नहीं होगा।"

"मैं कुछ नहीं जानती" वह नीचे देखती खडी रही।

"अच्छा मुझे जाना है" मैं बाहर निकला। ऊपर से चद्रमा की शीतल किरणें मेरे ऊपर पडी। गीत गुन गुनाकर मैं आगे बढा।

इसके बाद वर्ष तीन बीत गये। आज मैं एक अध्यापक हुँ। माँ-बाप की इच्छा के अनुसार हफीसखाँ की बेटी से ही मेरी शादी भी हुई है।

"क्या सोच रहे है, मेरा सवाल सुना है कि नहीं?" सिर पर हाथ फेर कर आँख से आँख मिलाकर मेरी पत्नी पूछ रही थी —

"अपना दिल दिया है कि नहीं?" मैं ने उस का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा —

"मैं तेरा ही हूँ, मेरा दिल भी तेरा है।"

"आप हार मानते है?"

"हाँ, मैं हार गया, तू जीत गयी"

"नहीं, हम दोनों जीत गये"

हंसी की आवाज बडी देर तक कमरे में गूँजती रही।

सर. सी. वी. रामन

P. S. RAMANATHAN
Ist B. Com.

२१ नवंबर सन् १९७० को विश्वप्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक, नोबल-पुरस्कार–विजेता सर चन्द्र शेखर वेंकिट्ट रामन का देहावसान हो गया। उनकी महत्वपूर्ण सेवाएँ संपूर्ण मानव जाति के लिए थी। विज्ञान के विशेषज्ञ होने के साथ हीं इतिहास, अर्थशास्त्र, संस्कृत आदि में आपका पाण्डित्य बहुत ही उच्चश्रेणी का माना जाता था। जिन भारत-वासियों ने वैज्ञानिक जगत में अपने देश का सर ऊँचा किया है उन में डा. सी. वी. रामन का नाम विशेष रूप से आदरणीय है।

डा. सी. वी. रामन का जन्म १७ नवम्बर १८८८ को त्रिचिनापल्ली में एक मध्यम श्रेणी के ब्राह्मण परिवार में हुआ। इनके पिता श्री चन्द्रशेखर अय्यर विशाखपट्टनम के हिन्दू कॉलेज में विज्ञान के प्रोफेसर थे। रामनजी हिन्दू कोलेज और मद्रास प्रसिटेंसी कोलेज के एक अच्छे विद्यार्थी रहे हैं। अठारह वर्ष की आयु में आपने एम. ए. की उपाधि प्राप्त की

विज्ञान में रामन जी की अद्भुत प्रतिभा देख कर विश्वविद्यालय ने उनको इंग्लैंड भेजना चाहा। किन्तु उनका स्वास्थ्य समुद्रीयात्रा करने योग्य नहीं था। अतः रामन जी को विलायत जाने का विचार छोडना पडा। भारत में रह कर वे अर्थशास्त्र की परीक्षाओं में असामान्य सफलता प्राप्त की फलतः में अर्थविभाग में 'डिप्टी अकौंटेंड' के पद पर आप नियुक्त हुए। इस पद पर काम करते हुए भी रामन जी का मन विज्ञान की ओर विशेष से आकृष्ट था। नौकरी में रहते समय रामन जी को अनुसंधान की उचित अवसर नहीं मिलता था। कुछ समय बाद वे कलकत्ते के एक प्रसिद्ध विज्ञान परिषद 'दि इन्ट्यन असोसियेशन फॉर दि कल्टिवेशन ओफ सयन्स' के सदस्य बने। बाद में सयन्स कोलेज से भी आप का संबंध हुआ। सर १९१४ में रामन जी सरकारी नौकरी छोडकर सयन्स कोलेज के प्रिन्सिपल बन गये

डा. रामन के अनुसंधानों का क्षेत्र बहुत ही विस्तृत एवं विशाल था। पहले आपने रंग और प्रकाश के क्षेत्र म नये प्रयोग किये। आप ने प्रकाश की किरणों की विश्लेषण कर नयी विशेष प्रकार की किरणों खोज निकालीं जो आज 'रामन किरणों' (Raman Rays) नाम से विदित हैं। उन किरणों के प्रभाव को 'रामन प्रभाव' (Raman Effect) कहते हैं।

'रामन किरणों' के आविष्कार के अलावा शब्द विज्ञान, समुद्र जल का नीला रंग, किरणों, प्रकाश और रंग आदि विषयों पर भी आपने अनुसंधान किया। वैज्ञानिक जगत ने बडी श्रद्धा के साथ आप के अनुसंधानों का स्वागत किया। सन् १९३० में आप को संसार का का सर्वश्रेष्ठ नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ। देश और विदेश की अनेक वैज्ञानिक संस्थाएँ उनको कई उपाधियाँ और पुरस्कार देकर स्वयं अभिमान करने लगी। इसके अतिरिक्त रामने जी संसार की अनेक वैज्ञानिक संस्थाओं के 'ऑनररी फेलो' भी बने। विश्व के विज्ञान के इतिहास में आपने अपने महान आविष्कारों से भारत का नाम अमर बनाया।

सन् १९३३ में श्री सी. वी. रामन बैंगलूर आये और वहीं आपने 'इन्डियन इनस्टिट्यूट ओफ सयन्स' की स्थापना की। वहाँ वे स्वयं अनुसंधान कार्य किया करते थे और अनेक युव-वैज्ञानिकों को शिक्षा भी दे रहे थे। स्व. डा. होमी भाभा, स्व. डा. के. एस. कृष्णन, डा. विक्रम साराभाई आदि आपके विश्व विख्यात शिष्य हैं।

आपसे मिलने वालों पर आप की नम्रता, सादगी, तपोमय जीवन और विद्वत्ता का अद्भुत प्रभाव पडता था। आज आप हमारे साथ नहीं हैं। किन्तु आपसे प्रशस्त किया हुआ अनुसंधान का राजमार्ग हमारे सामने है जिसमें चलकर हम उन्नति के मंजिल तक पहुँच सकते हैं।

तकदीर का खेल

C. A. ABDUL KAREEM
I B. Sc. Zoology

'अब मैं क्या करूँ? दुख ही मेरा जीवन हो गया है। मैं ने सपने में भी नहीं सोचा था कि मेरा जीवन ऐसा हो जाएगा। लेकिन क्या करें, विधि के हाथों मनुष्य केवल पुतला है।

अपने होस्टल के कमरे में बैठकर उस आधी रात में भी रहीम सोच रहा है। उसका दोस्त हमीद पास ही पलंग पर सो रहा है। सारी दुनिया सो रही है। लेकिन रहीम को नींद नहीं आती।

परीक्षा पास आ रही है। लोग कहते हैं कि प्री-डिग्री में पास होना आसान नहीं है। लेकिन जीवन की उलझनों में पडकर तडपनेवाले मुझको पढने का समय ही कहां मिलता है। कब तक इस जीवन का भार मैं सहूँगा। होस्टल में दो महीने का पैसा अब देना है। घर की हालत बिलकुल खराब।

दो साल पहले एस. एस. एल. सी. में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होकर मैं कितना खुश हुआ था। लोगों ने मेरी कितनी प्रशंसा की थी। पिताजी को मुझपर कितना अभिमान हुआ। उस दिन संतोष से आँखों में आसू भर कर पिताजी ने मुझसे कहा — "चाहे जितनी भी तकलीफें उठानी पडें, मैं तुझे पढाऊँगा, पढाकर एक डाक्टर बनाऊँगा।" मुझे कोलेज में प्रवेश मिला। बडे उत्साह से मैं पढने लगा।

वे दिन सच में खुशी के थे। अब मुझे वह खुशी कभी नहीं मिलेगी।

परिवार में मां-बाप, मैं और मेरी छोटी बहन; बस, इतने ही सदस्य थे। बड़े आनन्द से दिन गुजर रहे थे। छुट्टियों में मैं घर आऊँ तो घर में उत्सव सा हो जाता था।

दूसरे वर्ष का इसरा महिना था। जीवन में दुख की काली घटा छाने लगी। एक दिन मैं क्लास में बैठा था कि चपरासी ने आकर कहा—'मेरे लिए फोन है'।

पिताजी का फोन था। उन्होंने कहा—"माताजी की तबियत खराब है। जल्दी घर आओ" रास्ते में मैं प्रार्थना करता रहा—'हे ईश्वर मेरी माताजी पर दया करो। उनको जल्दी चंगा कर दो'

दो तीन दिन बाद माताजी को कुछ आराम मिला। मैं कोलेज चला आया। ठीक उसी दिन दोपहर को फिर भी घर से फोन आया। फोन किसी रिश्तेदार का था। उन्होंने मुझ जल्दी घर आने को कहा और फोन बन्द किया। एडी से चोटी तक मैं कोप उठा। माता जी के अनेक चित्र मेरी आँखों के सामने नाचने लगे। मैं जल्दी एक मोटर गाडी में घर पहुँचा। आँगन में बड़ी भीड को देख कर मेरी चेतना मूर्छित होने लगी। लेकिन उस अर्धचेतना में मैं ने घर के भीतर से माता जी की रोने की आवाज सुनी।

एक रिश्तेदार ने पास आकर आश्वास देते हुए कहा—'रहीम, दुखी मत हो। तुम्हारे पिताजी अकाल में ही हम सब को छोड कर स्वर्ग सिधारे। रोओ मत, तुम्हारे लिए हम सब हैं'।

मुझे ऐसा लगा कि मेरे पैरों के नीचे से धरती फिसलती जा रही है। मैं बेहोश हो गिर पडा।

बाद में क्या हुआ, मुझे मालुम नहीं। आँखें खुलीं तो देखा कि माता जी पास बैठ कर रो रही हैं।

पिता जी ने भविष्य के लिए कुछ भी नहीं रखा था। अब कुटुम्ब का भार मेरे ऊपर आया है। कितनी आशा के साथ प्री-डिग्री तक आया था। यदि सोचने लगूँ तो मेरी शक्ति और चेतना क्षीण हो लगती हैं। मुझे डाक्टर बनाने की पिताजी की अभिलाषा पूर्ण नहीं होगी। अभिलाषाओं के रमसान में बैठकर मैं जीवन की ओर देख रहा हूँ।

दीवार

Bhimal Vinod Gupta, 1 B.Com.

एक मौन दीवार
खडी थी,
अकेली,
जिसके ऊपर
एक बेखबर, नन्ही टहनी
झूम रही थी।
ठीक दीवार के बीचों बीच
एक दरार थी,
मानों कि मानव आत्मा में
कल्पना की दरार हो।
थोडी देर बाद
हवा आयी,
जोरों से,
जिसके कारण
दीवार गिर गयी
और मानव आत्मा की दरार—कल्पना
हमेशा के लिए विलीन हो गयी।

वि धि

MOHAMED KUTTY
II CHEMISTRY

मद्रस के मनोहर और विशाल शहर में रमेश पहुँच गया। पेटी लेकर वह चलने लगा। एक अपरिचित जगह में जीवन की नयी यात्रा। उसको मालुम नहीं था कि कहाँ जाए।

रास्ते में एक सज्जन से मिला। देखने में अच्छे मिजाज का आदमी। रमेश धीरे से उसके पास पहुँचा और कुछ पूछने लगा। उस सज्जन ने मलयालम में ही पूछा कि केरल से हो? दोनों में बातचित हुई। दूसरे सज्जन का नाम रवीन्द्र है जो जन्म से मलयाली है। रवीन्द्र रमेश को घर ले गया। घर के बरामदे में रमेश की छोटी बहन खडी थी। भाई के साथ एक नये आदमी को देखकर उस तरुणी ने आश्चर्य के साथ देखा और तुरन्त घर के भीतर चली गयी।

थोडी देर बार वह दोनों को कोफी लेकर आयी तो रवीन्द्र ने रमेश से कहा कि यही मेरी इकलौती बहन है। नाम है वासन्ती। फिर वासन्ती की ओर मुड कर कहा कि ये हैं रमेश जी जो नौकरी की तलाश में केरल से आये हैं।

कोफी पीने के बाद बातों ही बात रवीन्द्र ने रमेश के घर और माँ-बाप के बारे में पूछा। लेकिन रमेश थोडी देर चुप रहा और फिर एक लंबी सांस छोडकर रुक रुकर बोलने लगा। घर में सिर्फ मां ही थी। कुछ दिन

पहले वे भी इस दुनिया से चल बसीं। बाप के बारे में उसको ज्यादा नहीं मालुम। मां ने कहा था कि बाप उस के बचपन में ही मर गये थे।

रमेश की बातें सुनकर रवीन्द्र को दुख हुआ। उसने कहा कि मां तो मेरी भी इस दुनिया में नहीं हैं। पिताजी तो हैं, लेकिन घर में बहुत कम आया करते हैं। कुछ दूर के एक कारखाने के आप मैनेजर हैं और वहीं रहते हैं। घर में हम भाई-बहन ही हैं। रमेश को आश्वास देते हुए उस ने कहा कि तुम दुखी मत हो, चिन्ता मत करो। दुनिया में तुम्हारी सहायता के लिए मैं हूँ। अब तुम्हें कोई कष्ट होने नहीं दूँगा।

काल रूपी वृक्ष के दिन रूपी पत्ते झडते रहे। रमेश को रवीन्द्र की सिफारिश से एक दफ्तर में नौकरी मिली है। अब भी वह रवीन्द्र के घर में रहता है। वासन्ती से उसका अच्छा परिचय है। दोनों आपस में प्रेम भी करने लगे हैं। रवीन्द्र को यह मालुम भी हो गया तो उसको संतोष ही हुआ। उसने पिताजी से रमेश और वासन्ती की शादी के बारे में कहने की विचार किया। लेकिन पिताजी आजकल घर आते ही नहीं। जिस दिन रमेश से उनकी मुलाकात हुई उस दिन से वे काफी चिन्तित नजर आते हैं। उसके बाद घर आना भी उन्होंने बन्द कर दिया। हमेशा कारखाने में ही रहते हैं।

एक दिन रमेश कारखाने में गया और पिताजी के सामने अपना विचार तथा वासन्ती और रमेश का आग्रह व्यक्त किया। यह सुनते ही पिताजी एकदम चौंक उठे।

"बेटा, यह तुम ने क्या कहा"

"क्यों बप्पा रमेश अच्छा नहीं है?"

"हां, लेकिन, ... लेकिन", पिताजी मन की कह नहीं सके।

"बात क्या है पिताजी?"; रमेश को बडी उत्कण्ठा हुई। "वासन्ती को रमेश चाहता है, वह शुशील है, दफ्तर में काम करता है। इनकी शादी में आपको विरोध होने की ऐसी कौन सी बात है?"

पिताजी का चेहरा बिलकुल पीला पड गया। उन्होंने कहा —

'यह शादी कभी नहीं हो सकती, कभी नहीं"।

"लेकिन बहन को उससे प्रेम है"

"खी....."

"जी हां"

"ए भगवान.....यह मैं क्या सुन रहा हूँ!"

"क्यों बप्पा; आप क्यों परेशान हो रहे हैं?"

"बेटा, वह.....वह रमेशा....." वे वाक्य पूरा नहीं कर सके।

"रमेश! उसको क्या हुआ?"

"वह मेरा बेटा है; तुम्हारा भाई।"

"बप्पा....."

"हां बेटे, उसकी मां केरल में हमारे घर की नौकरानी थी। वर्षों पहले की बात है। जब तुम्हारा जन्म भी नहीं हुआ था। तुम्हारी मां गर्भवती थी और उसके घर में थी। जब नौकरानी मेरे ही कारण गर्भिणी हुई तो मैं ने उसे घर से निकाल दिया। गांव भर में इस संबंध में चर्चा होने लगी तो अपमान के भय से हम देश छोड कर यहाँ आये। आज वर्षों बाद विधि मेरे उस बेटे को मेरे ही पास ले आयी। रमेश से

बातें करने से ही मुझे पता चला कि हमारी वह पुरानी नौकरानी उसकी माता थी। इतना कहकर पिताजी भूतकाल में दृष्टि डाले निर्निमेष हो बैठे रहे।"

रवीन्द्र जल्दी रमेश के पास आया। वासन्ती और रमेश आसपास बैठे बातें कर रहे थे। रवीन्द्र को देखकर दोनों घबराकर उठ खड़े हुए। रवीन्द्र को मालुम नहीं था कि उनसे क्या कहे और कहां से शुरू करे।

किसी न किसी प्रकार उसने इतना कह डाला —

"रमेश तुम से एक बड़ी जरूरी बात कहनी है जिसके संबन्ध में आज तक हम नहीं जानते ले" एक मिनट के मौन के बाद उसने फिर कहा—"तुम मेरे और वासन्ती के भाई हो" रवीन्द्र ने अपने पिताजी से सुनी हुई सब बातें उनको बतायीं। रमेश सब सुनकर पत्थर सा खड़ा रहा। न बोला, न हिला, न रोया। वेदना की मूर्ति बन वासन्ती भी पास खड़ी रही। उस के दोनों कपोलों से आंसू बहते रहे। थोड़ी देर बाद रमेश ने वासन्ती के आंसू पोंछ डाले और कहा—"बहन मेरी बहन, रो मत, शांत हो।" पिताजी यह दृश्य दूर से देख रहे थे। उनकी आंखों से आंसू की दो बूँदें जमीन पर गिर पड़ीं। यह नहीं मालुम कि वे आंसू दुख के थे कि संतोष के।